शरीरान्तः स्थित चक्र
(मार्गदर्शन हेतु मात्र)

आसनों एवं अन्य अभ्यासों के साथ विशेष बिन्दु पर चित्त एकाग्र करना भी योग साधना का एक अङ्ग है। किसी अभ्यास में श्वास पर एकाग्रता रखने को कहा जाता है और कहीं अङ्ग विशेष पर एकाग्रता के लिए। अधिकांशतः एकाग्रता का केन्द्रबिन्दु कोई चक्र होता है। यह आत्मिक बिन्दु एकाग्रता के विकास के लिए अनिवार्य माध्यम है जो स्वयं में गहन उपयोगिता रखती है। योगाभ्यासों के द्वारा हम मन को शिथिल कर अविकल्प रूप से लाभान्वित होना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि किसी वस्तुविशेष पर एकाग्रता की जाए। किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करने की अपेक्षा यदि हम श्वास क्रिया पर या शरीर के किसी विशेष प्रदेश पर चित्त को एकाग्र कर यौगिक अभ्यास करें तो उसका प्रभाव बहुत अधिक बढ़ जाता है।

भौतिक रूप से चक्रों का सम्बन्ध प्रमुख नाड़ी जालों तथा अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से है। मानव रचना के ये प्रमुख प्रसारक एवं नियन्त्रक केन्द्र है। इन नाड़ी जालों या ग्रन्थियों पर अधिकांश आसनों का विशेष शक्तिशाली एवं लाभदायक प्रभाव पड़ता है। एक या दो ग्रन्थियों पर विभिन्न आसन प्रभाव डालते हैं। उदाहरणार्थ-सर्वांगासन के शक्तिशाली प्रभाव से ग्रीवा प्रदेश में स्थिल चुल्लिका ग्रन्थि की अच्छी मालिश होती है तथा उसका क्रिया म अत्यन्त सुधार हाता ह। याद इसक अभ्यास काल म इसी स्थान विशेष पर चित्त को स्थिर किया जाए तो बहुत अधिक लाभार्जन होगा।

अधिकांश व्यक्तियों में ये आत्मिक केन्द्र सुषुप्त एवं निष्क्रिय होते हैं और शक्ति का अधिकांश भाग अप्रयुक्त ही रह जाता है। योग दर्शन के अनुसार साधारणतः मानव की संभावित मानसिक शक्ति का दसवाँ भाग ही प्रयुक्त किया जाता है। शेष अप्रयुक्त शक्ति सुषुप्त रहती है। जिसका चेतना प्रक्रिया से सम्बन्ध नहीं होता है। मस्तिष्क का यह सुषुप्त व अज्ञात प्रदेश विस्तृत है। इसी भाँति अवचेतन और अचेतन मन की गहराइयों में ऐसी बातें हैं जो अज्ञात है या जिनका बहुत कम ज्ञान हमें है। आधुनिक मनोविज्ञान इसका समर्थन करता है। स्वतन्त्र रूप से या आसन के अभ्यास के साथ इन चक्रों पर ध्यान करने से शक्ति को चक्रों की ओर बढ़ने में प्रेरणा मिलती है। इससे आत्मिक एवं मानसिक शक्ति केन्द्रों के जागरण में सहायता मिलती है। फलतः व्यक्ति अन्य चेतन स्तरों का अनुभव प्राप्त करने में सक्षम बनता है जिनके विषय में सामान्यतः यह अचेत रहता है।

प्रमुख चक्र सात हैं। इनकी स्थिति मेरुदण्ड के मूल से सिर के शीर्ष प्रदेश तक है। ये परस्पर आत्मिक नलिकाओं या नाड़ियों के जाल से सम्बन्धित हैं स्थूल स्तर पर ये सात नाड़ियाँ नाड़ी संस्थान की नसों से संयुक्त हैं। प्रत्येक चक्र की आकृति पद्म की तरह है। प्रत्येक में दलों की संख्या निश्चित है एवं ये विशेष रंगों में हैं। दल उस विशेष चक्र की आत्मिक शक्ति तथा उसमें स्थित बाह्य एवं अन्तः प्रवाह की आत्मिक नलिकाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक चक्र तत्त्व विशेष के केन्द्र हैं जिनकी विशेष आकृतियाँ हैं, बीज मन्त्र है, प्रमुख इष्ट तथा उनके वाहन एवं सम्बन्धित विशेषताएँ हैं।

१. मूलाधार चक्र- स्थिति के अनुसार यह सबसे नीचे का चक्र है। यह मूल केन्द्र है। मूलाधार के नीचे भी कई केन्द्र हैं जो निम्न श्रेणी के प्राणियों के चेतना स्तर का प्रतिनिधित्त्व करते हैं। अन्य प्राणियों में ये क्रियाशील होते हैं परन्तु मनुष्यों में पूर्णतः सुषुप्त रहते हैं। इसका चिह्न गहरे लाल रंग का चतुर्दलीय कमल है। प्रत्येक दल या पंखुड़ी पर मन्त्र 'वं' 'शं' 'षं' 'सं' लिखा हुआ है। यह पृथ्वी तत्त्व का केन्द्र है जिसकी आकृति चौकोण है तथा बीज मन्त्र 'लँ' है। यह हाथी पर सवार है तथा पृथ्वी की स्थिरता एवं दृढ़ता का प्रतीक है।

मूलाधार के प्रमुख देवता सृष्टि के निर्माता ब्रह्मा हैं तथा देवी डाकिनी हैं जो शरीर की स्पर्शानुभूति का नियन्त्रण करती है। मूलाधार के केन्द्र में एक लाल त्रिभुज है जिसका सिरा नीचे की ओर है। त्रिभुज के अन्दर धुएँ के रंग का शिवलिङ्ग

है जिसके चारों ओर सुनहरे रंग के सर्प की साढ़े तीन कुण्डली है। अधिकांश व्यक्तियों में इस शक्ति की वृहत् मात्रा का प्रदर्शन मूलाधार के समीप स्थित प्रजनन केन्द्र के द्वारा होता है। इसी कारण मनुष्यों में काम प्रवृत्तियाँ प्रबल हैं।

वृहत् परिमाण की यह शक्ति भी प्रत्येक व्यक्ति में निहित प्रबल शक्ति की बहुत ही अल्प मात्रा है। आत्मशुद्धि एवं मन की एकाग्रता के द्वारा इस असीम शक्ति को जागृत कर उसे ऊपर के चक्रों में ले जाते हुए व अन्त में सहस्रार तक ले जाकर शुद्ध शक्ति का पवित्र चेतना से संयोग (शिव एवं शक्ति का योग) ही योग का अन्तिम लक्ष्य है।

२. **स्वाधिष्ठान चक्र-** इसकी स्थिति मेरुदण्ड में मूलाधार के कुछ ऊपर तथा मूत्रेन्द्रिय के बीच पृष्ठ प्रदेश में है। स्वाधिष्ठान का शाब्दिक अर्थ है- 'व्यक्ति विशेष का निवास स्थल'। इस चक्र का चिह्न तेज लाल रंग का षट्दलीय पद्म है।

दलों पर मन्त्र वं भं मं यं रं तथा लं लिखा है। मध्य में अर्धचन्द्र है तथा बीज मन्त्र बँ है। वाहन मगर है जो जल तत्त्व का प्रतिनिधित्त्व करता है। इसके इष्टदेव सृष्टि के रक्षक एवं पोषक भगवान् विष्णु हैं। देवी राकिनी हैं जो रक्ततत्त्व की नियन्त्रक हैं। भौतिक स्तर में स्वाधिष्ठान चक्र का प्रमुख सम्बन्ध उत्सर्जक तथा प्रजनन अंगों से है। अतः इस केन्द्र की शक्ति से इन अंगों में सुधार लाकर उन्हें व्यवस्थित किया जा सकता है। सूक्ष्म स्तर पर स्वाधिष्ठान चक्र अचेतन मन का स्थान है। अचेतन मन एकत्रित करने वाला कक्ष तथा भूतकाल की सूक्ष्म स्मृतियों को संग्रहीत करके रखने वाली चेतना। यह मनुष्य की ऐसी अति प्राचीन प्रवृत्तियों का केन्द्र है जिनकी जड़े बहुत नीची हैं। इस केन्द्र के शुद्धिकरण के पश्चात् मनुष्य पाशविक प्रवृत्तियों से ऊपर उठ जाता है।

३. **मणिपूर चक्र-** मणिपूर का अर्थ स्पष्टतः मणि का नगर है। यह अग्नि का केन्द्र है, ताप का मध्य बिन्दु है, मणि की भाँति चमकदार है तथा चैतन्यता और शक्ति से दीप्तिमान है। मणिपूर चक्र का वर्णन दस दल वाले पीतवर्णीय पद्म के रूप में मिलता है। दलों पर ये अक्षर लिखे हुए हैं- डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं। पद्म के अन्दर उल्टा त्रिभुज है जिसका रंग लाल है। बीज मन्त्र रँ है। वाहन भेड़ है जो चमकदार परन्तु आक्रमण करने वाला या आघात पहुँचाने वाला चौपाया जानवर है। प्रमुख देवता सृष्टि के संहारकर्ता रुद्र हैं। मांसल तत्त्वों को नियन्त्रित करने वाली देवी लाकिनी हैं। सूर्य क्षेत्र वह केन्द्र है जिसका सम्बन्ध प्रधानतः पाचन की प्राणमयी क्रिया तथा भोजन के शोषण से है। हमारे पेट में स्थित क्लोम पित्ताशय आदि अन्य ग्रन्थियों का कार्य वितरण के पूर्व भोजन की दाह क्रिया के लिए पाचक द्रव, अम्ल, रस आदि का स्राव करना है।

मणिपूर चक्र एक ऐसा सूक्ष्म केन्द्र है जो इन कार्यों पर नियन्त्रण रखता है। साथ ही वृक्कों के ऊपर स्थित उपवृक्क ग्रन्थियाँ भी मणिपूर चक्र की स्थूल रचनायें हैं। इन ग्रन्थियों से उपवृक्कीय रस का स्राव होता है। विशेष परिस्थियों में इन ग्रन्थियों द्वारा यह रस रक्त संस्थान में भेजा जाता है। इससे समस्त शारीरिक प्रक्रियायें तीव्र हो जाती है और मस्तिष्क चैतन्य एवं तेज होता है। इसके अलावा हृदय गति में वृद्धि हो जाती है, श्वास क्रिया की गति बढ़ जाती है व नेत्र अधिक खुल जाते हैं। सामान्यतः मनुष्यों में प्रतिघात करने की या चपलता की जो शक्ति होती है, उससे कहीं अधिक तीव्र क्रियाशीलता के लिए मानव शरीर तत्पर रहता है। आलस, सुस्ती, निराशा, अपचन और मधुमेह आदि पाचन संस्थान के दोषों से जो व्यक्ति पीड़ित हैं, उन्हें मणिपूर चक्र पर ध्यान इस अनुभूति के साथ करना चाहिए कि इस प्रदेश से ताप एवं शक्ति की उत्पत्ति हो रही है। कुछ मतानुसार (जैसे जैन, बौद्ध धर्म) मणिपुर चक्र की कुण्डलिनी का स्थान है, अतः यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह विचार इस दृष्टि से सत्य है कि रूपान्तरण के समय कुण्डलिनी का स्थान है, अतः यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह विचार इस दृष्टि से सत्य है कि रूपान्तरण के समय कुण्डलिनी मणिपूर चक्र से अधिक प्रकाशमान होती हुई जाती है। मणिपूर चक्र आत्मिक एवं भौतिक शरीर का प्राण केन्द्र है। यहाँ प्राण (ऊपर जाने वाली शक्ति) का संगम होता है। जिसके परिणामस्वरूप ताप की उत्पत्ति होती है और जो जीवन रक्षा के लिए अनिवार्य है।

४. **अनाहत चक्र-** अनाहत चक्र का शाब्दिक अर्थ है- आघात-रहित। सृष्टि की समस्त ध्वनियों की उत्पत्ति परस्पर दो धातुओं के आघात से ही होती है परन्तु भौतिक जगत् के परे जो दिव्य ध्वनि है, वही सभी ध्वनियों का स्रोत है। इसे अनहद् नाद कहते हैं। हृदय केन्द्र वह स्थल है जहाँ से ये ध्वनियाँ उत्पन्न होती है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की धड़कन है। योगी इस आन्तरिक, अस्तित्त्वहीन, अनन्त तरंग को ग्रहण कर सकते हैं।

इसका लाक्षणिक चिह्न १२ दलों वाला नीले रंग का कमल फूल है। दलों पर अंकित वर्ण ये हैं- कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं और ठं। मध्य में षट्कोणाकृति है जिसकी रचना दो मिले हुए त्रिभुजों से हुई है। बीजमन्त्र यँ है। वाहन शीघ्रगामी काले रंग का हिरण है। यह वायु तत्त्व का प्रतीक है। प्रमुख देव ईश है जो सभी में व्याप्त है। शरीर के चर्बीदार तत्त्व की देवी काकिनी इसमें स्थित हैं।

भौतिक स्तर पर अनाहत चक्र का सम्बन्ध हृदय एवं फेफड़ों से है। साथ ही रक्त संस्थान एवं श्वसन से भी यह सम्बन्धित है। पाण्डु रोग, धड़कन की बीमारी, क्षयरोग, श्वास की बीमारी, कास रोग व अत्यधिक तनाव की स्थिति में इस पर ध्यान करना

चाहिए। विशेषतः आसनों या अन्य यौगिक अभ्यासों के समय इस चक्र पर चित्त को एकाग्र करना चाहिए। हृदय प्रदेश में एक अन्धेरे कमरे या गुफा की कामना करते हुए इस चक्र पर ध्यान करना चाहिए। इसे हृदय कक्ष कहते हैं और इस खाली प्रदेश की रिक्तता पूर्ति श्वास क्रिया के प्रसारण संकुचन तथा धड़कन की ध्वनियों से की जाती है। अभ्यासकर्ता को दीपक की जलती हुई एक छोटी सी लौ देखने की कोशिश करनी चाहिए। वायुरहित स्थान में लौ की स्थिरता की कल्पना करनी चाहिए। यह प्रत्येक व्यक्ति में निहित जीवात्मा का संकेत है जिसे सांसारिक बातें अशान्त नहीं कर सकतीं।

५. **विशुद्धि चक्र**-विशुद्धि का शाब्दिक अर्थ है- शुद्ध करना। विशुद्धि चक्र शुद्धीकरण का केन्द्र है। इसका सांकेतिक चिह्न सोलह पंखुड़ियों वाला कमल पुष्प है, कमल का रंग जामुनी मिश्रित धुएँ का रंग है। दलों पर संस्कृत के वर्ण हैं- अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अंः। पद्म के मध्य श्वेत वृत्त है। बीज मन्त्र हँ है। इसका वाहन शुद्ध श्वेत गज है जो आकाश का सांकेतिक चिह्न है। इष्टदेव अर्द्धनारीश्वर है। (अर्द्ध शरीर शिव या पुरुष रूप एवं अर्द्ध शरीर पार्वती या नारी रूप) इस चक्र की देवी साकिनी हैं जिनका अधिकार अस्थि तत्त्व पर है।

विशुद्धि चक्र कण्ठ, नासिका, चुल्लिका एवं उपचुल्लिका ग्रन्थि प्रदेश अर्थात् स्वर कोष्ठ को प्रभावित करता है। इस प्रदेश के शरीरगत दोषों का निवारण इस चक्र पर चित्त की गहन एकाग्रता द्वारा किया जा सकता है।

ग्रीवा का यह केन्द्र वह स्थान है जहाँ दिव्य रस अमृत का पान किया जा सकता है। यह अमृत वह स्वादिष्ट मीठा रस है जिसकी उत्पत्ति ललना चक्र द्वारा होती है। ललना चक्र ग्रीवा के पृष्ठ प्रदेश के समीप स्थित है। अमृत अमरत्व प्रदान करने वाला रस है। खेचरी मुद्रा जैसे उच्च यौगिक अभ्यासों द्वारा इस रस की ग्रन्थि को क्रियाशील बनाया जा सकता है। इस विशेष रस का पान कर योगी इच्छानुसार कितनी भी अवधि तक बिना अन्न जल ग्रहण किए जीवित रह सकता है। ललना चक्र पर अधिकार प्राप्त कर भारत के अनेक योगी भूमिगत समाधि का प्रदर्शन करते हैं। उनका शरीर भूमि में दफना दिया जाता है। कई दिनों के बाद भी ये जीवित अवस्था में ही बाहर आते हैं। ललना चक्र को उत्प्रेरित करने वाला कोई भी अभ्यास योग्य गुरु के निर्देशन में ही करना चाहिए। अन्यथा कुछ संकट उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार के उच्च अभ्यास के लिए साधक की दशा उपर्युक्त न होने पर कड़वे व विषैले रस की उत्पत्ति होती है। व्यक्ति को इस चक्र पर ध्यान इस अनुभव के साथ करना चाहिए कि अमृत शीतल मीठी बूँदें उस पर गिर रही है और विषैले तत्त्वों का नाश कर आनन्दानुभूति प्रदान कर रही है।

६. **आज्ञा चक्र**- इस चक्र को तृतीय नेत्र, ज्ञान चक्षु, त्रिकुटी, त्रिवेणी, भूमध्य, गुरुचक्र या शिवनेत्र भी कहा जाता है। ध्यान की ऊँची अवस्था में शिष्यगण इसी चक्र के माध्यम से गुरु की आज्ञा और निर्देशों को ग्रहण करते हैं। दिव्य उच्च चेतना का आदेश भी इसी से ग्रहण किया जाता है। इसका लाक्षणिक चिह्न भूरे या श्वेत रंग का द्विदलीय पद्म है। दलों पर हं क्षं लिखा होता है। ये प्राणशक्ति के ऋणात्मक एवं धनात्मक प्रवाह का प्रतिनिधित्त्व करते हैं। दोनों प्रवाह इसी बिन्दु की ओर हैं। पद्म के मध्य में बीज मन्त्र ॐ है। इष्ट परमशिव अरूप चेतना है। इस चक्र की देवी हाकिनी है जो इस चक्र के तत्त्व सूक्ष्म मन या मानस का नियन्त्रण करती हैं।

आज्ञा चक्र एक प्रसिद्ध केन्द्र है। ध्यान की अनेक क्रियाओं में इस पर ही ध्यान किया जाता है। सामान्यतः हम भ्रूमध्य पर ही ध्यान करते हैं परन्तु इस चक्र का वास्तविक स्थान मस्तिष्क प्रदेश में है। भौतिक शरीर में इससे समानता रखने वाली रचना पीनियल नामक गूढ़ अन्तःस्रावी ग्रन्थि है। औषधि क्षेत्र के वैज्ञानिकों ने अभी तक इसके जीवतत्त्व सम्बन्धी कार्यों का पता नहीं लगाया है। इस केन्द्र का वास्तविक स्थिति का पता लगाना कठिन है। भूमध्य केन्द्र इस चक्र को प्रेरित करने के लिए एक बटन का काम करता है। यह चक्र दृष्टि नाड़ी, गन्ध, पिण्ड तथा बुद्धि, न्याय, तर्क जैसी मानसिक प्रक्रियाओं के लिए जिम्मेदार मस्तिष्क के अनुकूल भी है। मानव की प्रमुख विशेषता है कि वह इन्द्रियों द्वारा प्राप्त विभिन्न सूचनाओं का चुनाव एवं त्याग उनकी महत्ता के आधार पर करता है। यह राजयोग का विषय है।

आज्ञा चक्र का स्थान पीनियल ग्रन्थि है। यह ग्रन्थि मस्तिष्क में छोटे मटर के बराबर होती है। विकसित मनुष्यों में इसका आकार अपेक्षाकृत बहुत ही छोटा हो जाता है। आत्मिक स्तर पर यह सूक्ष्म बिन्दु भौतिक, मानसिक और आत्मिक शरीर के मध्य सेतु का कार्य करता है। आज्ञा चक्र के जागरण द्वारा ही व्यक्ति दिव्य दृष्टि, दिव्य श्रवण, विचार संवरण तथा अन्य असाधारण गुप्त शक्तियों का विकास कर सकता है। विचार शक्ति भी अति सूक्ष्म विभिन्न तत्त्वों का रूप ग्रहण करती है। जब मस्तिष्क उन्नत एवं संवेदनशील बन जाता है तब आज्ञा चक्र के माध्यम से विचार शक्तिको भेजना एवं ग्रहण करना संभव हो जाता है। गहरी तथा ऊँची चेतना के प्रदेश में खुलने वाला यह आत्मिक द्वार है। इसके अतिरिक्त आज्ञा चक्र को सक्रिय बनाकर बौद्धिक शक्ति, स्मरण शक्ति, इच्छा शक्ति, एकाग्रता आदि मानसिक शक्तियों की वृद्धि की जा सकती है।

७. बिन्दु चक्र- सिर के ठीक पीछे जहाँ हिन्दू चोटी रखते हैं, एक विशेष बिन्दु है। यह एक महत्त्वपूर्ण आत्मिक केन्द्र है। उसे सोम चक्र कहा जाता है। इसका सांकेतिक चिह्न अर्द्धचन्द्र एवं चाँदनी रात्रि है। इसका सम्बन्ध पुरुषों में वीर्यरस उत्पन्न करने से है। इसी बिन्दु से यह रस टपकता है। बिन्दु का अर्थ ही है-वीर्य बूँद। प्राचीन क्रिया योग विज्ञान के अनुसार बिन्दु चक्र एकाग्रता के लिए अत्यधिक महत्त्व का है। यहाँ उत्पन्न होने वाली आत्मिक ध्वनियों को उस पर ध्यान करते हुए ग्रहण किया जा सकता है।

८. सहस्रार- वास्तव में यह चक्र नहीं, वरन् उच्चतम चेतना के वास का स्थान है। इसे सहस्र दलों वाले चमकीले कमल पुष्प के रूप में दृष्टिगत किया जा सकता है। दलों पर संस्कृत के समस्त वर्ण अंकित हैं। सम्मिलित रूप से इसमें सम्पूर्ण शक्तियाँ निहित हैं जिनका सम्बन्ध पचास बीज मन्त्र की शक्ति के बीस गुणक से है। कमल के केन्द्र स्थल पर उज्वल शिवलिङ्ग है जो पवित्र चेतना (शिव) का प्रतीक है। यह वही स्थल है जहाँ शिव शक्ति का आश्चर्यजनक योग, चेतना का तत्त्व एवं शक्ति से संयोग तथा व्यक्तिगत आत्मा का असीम आत्मा से मिलन होता है।

योग और तन्त्र दर्शन के अनुसार ब्रह्माण्ड की सुष्टि इन्हीं शक्तियों के विच्छेदन से हुई है। सत्यतः इन दोनों शक्तियों की मूलवस्तु एक ही है। चेतना, स्थिर शक्ति तथा प्रकृति क्रियात्मक शक्ति है। सर्वप्रथम प्रकृति तीन विभागों या गुणों में विभाजित होती है। ये है-तमस् (जड़ता, आलस्य) रजस् (क्रियाशीलता, शक्ति) और सत्त्व (समतुल्य, सन्तुलन शान्ति)। हमारे मन तथा शरीर से लेकर सूर्य तथा तारों और सम्पूर्ण सृष्टि में ये तीन शक्तियाँ व्याप्त हो जाती हैं। इन तीन गुणों से प्रकृति के आठ तत्त्व विकसित होते हैं। विकास क्रिया सूक्ष्म तत्त्व से स्थूल तत्त्व की ओर होती है। उदाहरणार्थ-बुद्धि अहंकार इत्यादि से अग्नि जल व पृथ्वी की ओर। पृथ्वी सर्वाधिक स्थूल तत्त्व है अतः इस क्रिया का अन्त हो जाता है। निम्नतम उत्पत्ति के उपरान्त निर्माण की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है।

इस प्रकार निम्न प्रदेशों में स्थित पाँच चक्र स्थूल तत्त्व है। आज्ञा चक्र सूक्ष्म तत्त्व है तथा उच्चतम केन्द्र सहस्रार शुद्ध चेतना तथा सर्वोन्नत है। जागृति के उपरान्त कुण्डलिनी सब चक्रों में से होती हुई सहस्रार पर पहुँचती है तथा उसी स्रोत में उसका विलीनीकरण हो जाता है जहाँ से उसकी उत्पत्ति हुई थी।

-प्रसिद्ध योगाचार्य स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी का लेख

भोगे रोगभयं कुले च्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयं,
मौने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जराया भयम्।
शास्त्रे वादभयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयं,
सर्वं वस्तु भयावहं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम्॥

भोगों में रोग का भय है, ऊँचे कुल में पतन का भय है, धन में राजा का भय है, मौन में दीनता का भय है, बल में शत्रु का भय है, रूप में वृद्धावस्था का भय है, शास्त्र में वाद-विवाद का भय है, गुण में दुष्टजन का तथा शरीर में काल का भय है- इस प्रकार संसार में मनुष्यों के लिये सभी वस्तुएँ भयपूर्ण हैं, भय से रहित तो केवल वैराग्य ही है।